

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 23: पृथु का प्रस्थान

21 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



दीर्घ तथा धर्ममय शासन के पश्चात्, राजा पृथु अपनी समर्पित रानी सहित वन में निवृत्त होते हैं, और वहाँ, गहन तपस्या तथा एकनिष्ठ प्रेम में, अपना हृदय पूर्णतः परम भगवान् में स्थिर करते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

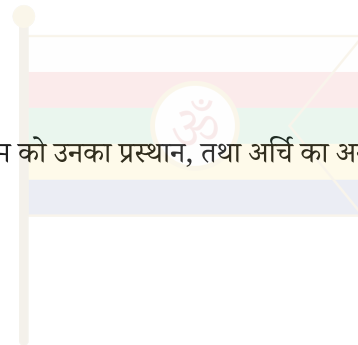
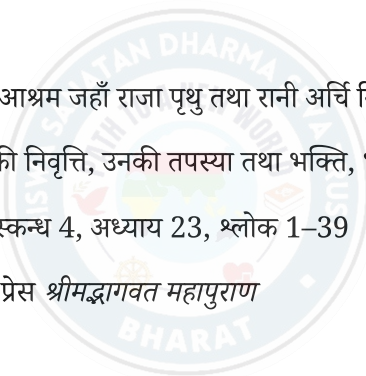
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में, महान् राजा पृथु ने विनम्रता से चार कुमारों का ज्ञान ग्रहण किया और उसे जीया, अपनी समस्त भव्यता के बीच अनासक्त, सूर्य की भाँति। यह त्रयोविंश अध्याय उनके उदात्त जीवन को उसके शान्त समापन तक ले आता है। दीर्घ तथा धर्ममय शासन के पश्चात्, पृथु अपने

पिछले वर्षों में अपना राज्य अपने पुत्रों को सौंप देते हैं और अपनी समर्पित रानी अर्चि सहित वन में निवृत्त होते हैं। वहाँ वे केवल भगवान् की प्रसन्नता के लिए एक कठोर तथा एकनिष्ठ तपस्या करते हैं, अपने मन को संसार से पूर्णतः खींचते तथा उसे परम पर स्थिर करते हुए। अपने तपोमय जीवन के अन्त में, ज्ञान तथा वैराग्य की शक्ति से अपने ही सच्चे स्वरूप में स्थित होकर, वे अपने नश्वर शरीर को पूर्ण भक्ति में त्याग देते हैं और भगवान् के परम धाम को प्राप्त करते हैं; और उनकी निष्ठावान् रानी, उनसे पृथक् रहने में असमर्थ, मृत्यु तथा महिमा में उनका अनुसरण करती है। मैत्रेय इस आश्वासन के साथ समापन करते हैं कि इस पावन कथा को सुनने वाला प्रत्येक व्यक्ति पृथु के ही गन्तव्य तक पहुँच जाता है। यह भक्ति में पूर्ण हुए एक जीवन का, और एक ऐसी मृत्यु का अध्याय है जो अन्त नहीं बल्कि एक घर-वापसी है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 23 (त्रयोविंश अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: पृथु महाराज की तपस्या एवं भगवद्धाम-प्रस्थान की कथा
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: वह वन-आश्रम जहाँ राजा पृथु तथा रानी अर्चि निवृत्त होते हैं
- केन्द्रीय विषय: पृथु की निवृत्ति, उनकी तपस्या तथा भक्ति, भगवान् के धाम को उनका प्रस्थान, तथा अर्चि का अनुसरण
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 23, श्लोक 1-39
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 22 ने राजा पृथु को चार कुमारों का उपदेश गहरी विनम्रता से ग्रहण करते, तथा उसे जीते हुए, अपनी साम्राज्य-भव्यता के बीच अनासक्त, सूर्य की भाँति रहते दिखाया। यह त्रयोविंश अध्याय उस वैराग्य के स्वाभाविक फल को दिखाता है: समय की पूर्णता में, पृथु संसार से पूर्णतः मुड़कर भगवान् को खोजने वन में निवृत्त होते हैं।

वन में निवृत्ति

जब पृथु ने दीर्घ तथा धर्ममय शासन कर लिया और देखा कि उनके जीवन का कार्य पूर्ण हो गया, तब उन्होंने अपना राज्य अपने पुत्रों को सौंप दिया और, अपनी समर्पित रानी अर्चि सहित, अपनी राजधानी से एक वन-आश्रम में निवृत्त हुए, पूर्णतः भगवान् को समर्पित व्यक्ति का कठोर तथा सरल जीवन ग्रहण करते हुए।



अपने पिछले वर्षों में, राजा पृथु अपना राज्य अपने पुत्रों को सौंपते हैं और अपनी समर्पित रानी अर्चि सहित एक वन-आश्रम में निवृत्त होते हैं, स्वयं को पूर्णतः भगवान् को देने (श्लोक 1-6)।

वहाँ, एक महान् साम्राज्य के सुखों को वन के अनुशासन के लिए त्यागकर, वे पहले वृक्षों की जड़ों तथा तनों पर, फिर फलों तथा सूखे पत्तों पर, फिर कुछ काल केवल जल पर, और अन्ततः केवल प्राण-वायु पर निर्वाह करते हुए अपने शरीर को उत्तरोत्तर वश में करते गए। ग्रीष्म में वे चार अग्नियों तथा ऊपर तपते सूर्य से घिरकर बैठे, वर्षा-ऋतु में मूसलाधार वृष्टि में खुले खड़े रहे, और शीत में गले तक जल में खड़े होकर, केवल गंगी भूमि पर सोते हुए, वन के प्रत्येक कष्ट को अपने हृदय के एकमात्र लक्ष्य की ओर मोड़ते रहे (श्लोक ४-६)।

सर्वोच्च तपस्या

धैर्यपूर्वक सहन करते हुए, वाणी तथा इन्द्रियों पर पूर्ण संयम रखते, ब्रह्मचर्य में दृढ़, और अपने प्राण को भी वश में लाकर, पृथु ने सबसे कठोर तप किया — केवल एक ही उद्देश्य से: परम भगवान् श्रीकृष्ण को प्रसन्न करना। उन्होंने न स्वर्ग चाहा, न ऐश्वर्य, न कोई फल, अपितु केवल उन भगवान् की प्रसन्नता चाही जिनसे वे प्रेम करते थे।

तितिक्षुर्यतवाग्दान्त ऊर्ध्वरेता जितानिलः ।

आरिराधयिषुः कृष्णमचरत्तप उत्तमम् ॥ ७ ॥

titikṣur yata-vāg dānta ūrdhva-retā jītānilaḥ ārirādhayiṣuḥ kṛṣṇam acarat tapa uttamam

अर्थ: सहनशील, अपनी वाणी तथा इन्द्रियों को वश में करते, ब्रह्मचारी, तथा प्राण-वायु को जीतते, पृथु ने सर्वोच्च तपस्या की, केवल कृष्ण को प्रसन्न करने की अभिलाषा से। (स्कन्ध 4, अध्याय 23, श्लोक 7)



वन में, पृथु एक कठोर तथा एकनिष्ठ तपस्या करते हैं — वाणी, इन्द्रियों, तथा प्राण को वश में करते हुए — एक ही प्रयोजन के लिए: परम भगवान् कृष्ण को प्रसन्न करने (श्लोक 7-14)।

ऐसे अनुशासित अभ्यास से उन्होंने अपना हृदय पूर्णतः शुद्ध कर लिया, और उनका मन, संसार के प्रत्येक विषय से पीछे खींचा गया, बिना डिगे केवल भगवान् पर विश्राम करने लगा।

यह पूछना उचित है कि यह अध्याय पृथु की योग-साधना की निपुणता का इतना विस्तार से वर्णन क्यों करता है, केवल यह दिखाने के लिए कि अन्ततः वे उसे भी त्याग देते हैं। मैत्रेय गहरा तात्पर्य स्पष्ट करते हैं: चाहे साधक योग अथवा ज्ञान के मार्ग पर कितना भी दूर क्यों न चला जाए, माया तब तक वास्तव में दूर नहीं होती जब तक उसमें कृष्ण-कथा को सुनने तथा कहने की सच्ची रुचि न जागे। पृथु ने, यद्यपि शरीर तथा प्राण पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त कर लिया था, अपनी मुक्ति उस तकनीक पर निर्भर नहीं रखी; भक्ति के द्वारा उनका मन पहले ही भगवान् के चरणों में स्थिर हो चुका था, और भगवान् के अतिरिक्त योग अथवा ज्ञान के किसी भी फल में उनकी रुचि नहीं रह गई थी। यही इस अध्याय की मौन शिक्षा है प्रत्येक साधक के लिए: तप तथा योग साधन को तीक्ष्ण करते हैं, परन्तु केवल भक्ति ही कार्य को पूर्ण करती है।

छिन्नान्यधीरधिगतात्मगतिर्निरीह-
स्तत्तत्यजेऽच्छिनदिदं वयुनेन येन ।
तावन्न योगगतिभिर्यतिरप्रमत्तो
यावद्दाग्रजकथासु रतिं न कुर्यात् ॥ १२ ॥

chinnānya-dhīr adhigatātma-gatir nirīhas tat tatyaje 'cchinad idam vayunena yena tāvan na yoga-gatibhir yatir apramatto yāvad gadāgraja-kathāsu ratim na kuryāt

अर्थ: आत्म-ज्ञान के द्वारा जिनका मन प्रत्येक अन्य विषय से मुक्त हो चुका था, तथा जिन्हें अब कुछ और नहीं चाहिए था, पृथु ने उन्हीं योग-साधनों को भी त्याग दिया जिनसे उन्होंने वह ज्ञान पाया था — क्योंकि, वे समझ गए थे, कोई भी साधक, चाहे कितना भी सावधान क्यों न हो, तब तक माया से पार नहीं होता जब तक उसमें भगवान् की कथाओं के प्रति रुचि न जागे। (स्कन्ध 4, अध्याय 23, श्लोक 12)

भगवान् के धाम को प्रस्थान

जब उनके तपोमय जीवन ने अपनी पूर्णता पाई, पृथु ने अपना शरीर त्यागने की तैयारी की। गहन ध्यान के द्वारा उन्होंने अपने अस्तित्व के प्रत्येक आवरण — मन, इन्द्रियाँ, प्राण-वायु, तथा वे तत्त्व जिनसे शरीर बना है — को उनके ब्रह्माण्डीय स्रोत में पुनः विलीन किया, उन पर से अपना सम्पूर्ण स्वामित्व-भाव छोड़ते हुए, यहाँ तक कि उनके पास भगवान् के शाश्वत सेवक के रूप में अपनी ही पहचान के अतिरिक्त कुछ शेष न रहा। फिर, स्वयं के स्वामी के रूप में, उन्होंने अपने नश्वर ढाँचे को पूर्ण शान्ति में त्याग दिया, उनका हृदय पूर्णतः भगवान् के साथ।

तं सर्वगुणविन्यासं जीवे मायामये न्यधात् ।
तं चानुशयमात्मस्थमसावनुशयी पुमान् ।
ज्ञानवैराग्यवीर्येण स्वरूपस्थोऽजहात्प्रभुः ॥ १८ ॥

*taṁ sarva-guṇa-vīnyāsaṁ jīve māyāmaye nyadhāt taṁ cānuśayam ātma-stham asāv anuśayi
pumān jñāna-vairāgya-vīryeṇa svarūpa-stho 'jahāt prabhuḥ*

अर्थ: उन्होंने समस्त भौतिक तत्त्वों को उनके स्रोत में विलीन किया और, आत्मा में स्थित होकर, उनसे तादात्म्य न रखा; फिर, ज्ञान तथा वैराग्य की शक्ति से, अपने ही सच्चे स्वरूप में स्थित होकर, स्वामी ने अपना शरीर त्याग दिया। (स्कन्ध 4, अध्याय 23, श्लोक 18)



ज्ञान तथा वैराग्य से अपने ही सच्चे स्वरूप में स्थित होकर, राजा पृथु अपने नश्वर शरीर को पूर्ण भक्ति में त्याग देते हैं और भगवान् के परम धाम को प्राप्त करते हैं (श्लोक 15-22)।

इस प्रकार महान् राजा, भगवान् के भक्तों में अग्रगण्य, ने भगवान् के परम, अविनाशी धाम को प्राप्त किया — वह लक्ष्य जिसके लिए वे जीए, प्रयत्न किए, तथा प्रेम किया।

रानी आंचे को भाक्ते

उनकी रानी, अर्चि — स्वयं लक्ष्मी देवी का अंश — अपने स्वामी के बिना संसार में रहना सह न सकीं। जीवन तथा मृत्यु में उनके प्रति निष्ठावान्, उन्होंने श्रद्धापूर्वक उनके शरीर की सेवा की और फिर, अपना मन उन पर तथा उस भगवान् पर स्थिर करके जिनकी उन्होंने साथ सेवा की थी, इस संसार से उनका अनुसरण किया, उसी शाश्वत धाम को महिमा में आरूढ़ होते हुए, देवों तथा ऋषियों द्वारा सम्मानित। इस प्रकार वह समर्पित दम्पति, जिन्होंने एक होकर शासन तथा उपासना की थी, भगवान् के चरणों में सदा के लिए एक हो गए।

कथा आगे बढ़ाते हुए मैत्रेय ने विदुर को बताया कि देवताओं की पत्नियों ने, अर्चि के आरोहण को देखकर, उनकी भक्ति पर आश्चर्य किया और उन लोगों की मूर्खता पर मनन किया जो, दुर्लभ मनुष्य-जन्म पाकर, उसे इन्द्रियों के क्षणभंगुर सुखों पर गँवा देते हैं। उन मरणधर्मा जनों के लिए, उन्होंने कहा, जो — यद्यपि उनका पार्थिव जीवन संक्षिप्त है — भक्ति की निष्कर्म शान्ति प्राप्त करते तथा भगवान् के धाम को पहुँचते हैं, ऐसा क्या शेष रहता है जिसे अब भी दुर्लभ कहा जा सके?

तेषां दुरापं किं त्वन्यन्मर्त्यानां भगवत्पदम् ।

भुवि लोलायुषो ये वै नैष्कर्म्यं साधयन्त्युत ॥ २७ ॥

teṣāṁ durāpaṁ kiṁ tv anyan martyānāṁ bhagavat-padam bhuvi lolāyuṣo ye vai naiṣkarmyaṁ sādhayanty uta

अर्थ: उन मरणधर्मा जनों के लिए जो, यद्यपि पृथ्वी पर संक्षिप्त जीवन के, निष्कर्मता प्राप्त करते तथा भगवान् के धाम को पहुँचते हैं — ऐसा क्या शेष रहता है जिसे पाना अब भी कठिन हो? (स्कन्ध 4, अध्याय 23, श्लोक 27)

देवताओं की पत्नियों ने बात आगे बढ़ाई: जिसे भी यह दुर्लभ मनुष्य-शरीर मिला है — जो स्वयं दुःख से मुक्त होने का एक अवसर है — और वह फिर भी उसे केवल इन्द्रिय-सुख की कठिन, क्षणभंगुर उपलब्धियों में गँवा देता है, वह स्वयं को ही ठगता है, ऐसा उन्होंने कहा, ठीक उस व्यक्ति के समान जो अपने ही भले के विरुद्ध कार्य करता है (श्लोक २८)। पृथु के साथ तुलना करें, जिन्होंने अपना एक मनुष्य-जीवन केवल भगवान् तक पहुँचने में लगाया — उनके ये वचन हर उस आत्मा के लिए एक चेतावनी हैं जो अभी भी अपने समय के साथ सौदेबाज़ी कर रही है।

कथा की महिमा

तब मैत्रेय ने पृथु की महानता का सार कहा — भगवान् के भक्तों में सबसे महान्, असीम तथा उदार चरित्र वाले, जिनकी कथा वे अब विदुर को सुना चुके थे।

इत्थम्भूतानुभावोऽसौ पृथुः स भगवत्तमः ।

कीर्तितं तस्य चरितमुद्दामचरितस्य ते ॥ ३० ॥

ittham-bhūtānubhāvo 'sau pṛthuḥ sa bhagavattamaḥ kīrtitaṁ tasya caritam uddāma-caritasya te

अर्थ: ऐसी थी पृथु की महिमा, भगवान् के भक्तों में सबसे महान्, असीम चरित्र वाले; उनकी कथा मैं अब तुम्हें सुना चुका हूँ। (स्कन्ध 4, अध्याय 23, श्लोक 30)

और उन्होंने प्रत्येक श्रोता के लिए एक वचन के साथ समापन किया: जो कोई श्रद्धा तथा एकाग्रता से इस परम पावन वृत्तान्त को पढ़े, दूसरों को पढ़वाए, अथवा सुने, वह पृथु द्वारा प्राप्त उसी लक्ष्य को पा लेता है।

य इदं सुमहत्पुण्यं श्रद्धयावहितः पठेत् ।

श्रावयेच्छृणुयाद्वापि स पृथोः पदवीमियात् ॥ ३१ ॥

ya idam sumahat puṇyam śraddhayāvahitaḥ paṭhet śrāvayec chṛṇuyād vāpi sa pṛthoḥ padavīm iyāt

अर्थ: जो कोई, श्रद्धा तथा ध्यान से, इस परम पावन वृत्तान्त को पढ़ता है, या सुनवाता है, या सुनता है, वह उसी धाम को प्राप्त करता है जो पृथु ने प्राप्त किया। (स्कन्ध 4, अध्याय 23, श्लोक 31)



जीवन तथा मृत्यु में निष्ठावान्, रानी अर्चि अपने स्वामी का संसार से अनुसरण करती हैं, उसी शाश्वत धाम को महिमा में आरूढ़ होते हुए, देवों तथा ऋषियों द्वारा सम्मानित (श्लोक 23-31)।

इस प्रकार त्रयोविंश अध्याय, और उसके साथ राजा पृथु का सम्पूर्ण देदीप्यमान इतिहास, अपने समापन तक आता है — एक जीवन जो एक पतित संसार को बचाने भगवान् की शक्ति के अवतरण के रूप में आरम्भ हुआ, और उस पूर्ण भक्ति में समाप्त हुआ जो एक आत्मा को घर ले जाती है। यहाँ से कथा अगली पीढ़ी की ओर, और भगवान् शिव के उस स्तोत्र की ओर मुड़ती है जो प्रचेताओं को सिखाया गया, जिसे आगे के अध्याय खोलेंगे।

इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

1. एक अच्छे जीवन का मुकुट एक अच्छा अन्त है। पृथु अन्त तक अपने सिंहासन से नहीं चिपकते; उचित समय पर वे उसे रख देते हैं और पूर्णतः भगवान् की ओर मुड़ते हैं। एक भली प्रकार जीए गए जीवन का अन्तिम कार्य संसार पर अपनी पकड़ ढीली करना तथा भगवान् को थामना है (श्लोक 1-3)।
2. सर्वोच्च तपस्या केवल भगवान् की प्रसन्नता के लिए की जाती है। पृथु की कठोर साधना न स्वर्ग खोजती है न कोई पुरस्कार, “केवल कृष्ण को प्रसन्न करने के लिए।” आध्यात्मिक प्रयत्न अपना शुद्धतम रूप तब पाता है जब उसका एकमात्र लक्ष्य भगवान् की प्रसन्नता हो (श्लोक 7)।
3. भक्त के लिए मृत्यु एक घर-वापसी है। अपने सच्चे स्वरूप में स्थित होकर, पृथु शान्ति में अपना शरीर त्यागते हैं और भगवान् के धाम को प्राप्त करते हैं। जिसका हृदय भगवान् के साथ है, उसके लिए शरीर का अन्त हानि नहीं बल्कि आगमन है (श्लोक 18)।
4. भक्ति वह प्राप्त करती है जो कुछ और नहीं कर सकता। जो भगवान् के धाम को पहुँचते हैं उनके लिए ऐसा कुछ शेष नहीं जिसे पाना कठिन हो। भगवान् की वह एक प्राप्ति अपने भीतर वह प्रत्येक भला समाए है जिसे आत्मा खोज सकती है (श्लोक 27)।
5. एक भक्त की कथा सुनना हमें उसकी गति की ओर ले जाता है। मैत्रेय वचन देते हैं कि जो कोई इस वृत्तान्त को श्रद्धा से सुनता है वह पृथु के अपने धाम को प्राप्त करता है। पावन कथा केवल मार्ग के विषय में नहीं है; वह स्वयं उस पर एक पग है (श्लोक 31)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

राजा पृथु के जीवन में एक दुर्लभ तथा सुन्दर पूर्णता है, और यह अध्याय उसका शान्त मुकुट है। वे संसार में एक ध्वस्त पृथ्वी को बचाने भगवान् की अपनी शक्ति के अवतरण के रूप में आए; उन्होंने न्याय से शासन किया, भूमि से समृद्धि खींची, सौ यज्ञ किए, अपने शत्रु को क्षमा किया, भगवान् को साक्षात् देखा, अपनी प्रजा को सिखाया और बदले में ऋषियों से सीखा — और अब, अन्त में, वे बस उस सबको रख देते हैं और भगवान् के साथ अकेले होने वन में चले जाते हैं। सबसे मार्मिक यह है कि उनका अन्त कितना स्वाभाविक है। कोई चिपकाव नहीं, कोई भय नहीं, अपने बनाए साम्राज्य पर कोई अन्तिम पकड़ नहीं; सब कुछ “सूर्य की भाँति” धारण करके, वे सब कुछ सूर्यास्त की भाँति छोड़ सकते हैं। वे इस छोड़ने का अभ्यास अपने सम्पूर्ण जीवन में करते रहे हैं, उस वैराग्य में जिसकी कुमारों ने प्रशंसा की, और इसलिए जब अन्तिम छोड़ना आता है, वह एक झटका नहीं बल्कि एक घर-वापसी है। और उनके पास अर्चि खड़ी हैं, जिनका प्रेम अपने स्वामी का मृत्यु के द्वारों के भी पार अनुसरण करता है — एक ऐसी भक्ति का चित्र जो इतनी पूर्ण है कि मरणशीलता भी उसे उसके लक्ष्य से पृथक् नहीं कर सकती। उनकी कथा हमें बताती है कि एक जीवन इससे नहीं नापा जाता कि वह कितना संचित करता है बल्कि इससे कि वह कितनी पूर्णता से दिया जाता है, और कि मृत्यु, उनके लिए जिन्होंने सचमुच भगवान् से प्रेम किया, सब कुछ खोना नहीं बल्कि उस एक को पाना है जिसमें सब कुछ धारित है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, उस छोड़ने की कला का अभ्यास करें जो एक भक्तिपूर्ण जीवन का मुकुट है। एक ऐसी वस्तु चुनें जिसे आप बहुत कसकर पकड़े हैं — कोई सम्पत्ति, कोई भूमिका, कोई योजना, कोई चिन्ता — और, एक छोटे तथा सुविचारित ढंग से, उस पर अपनी पकड़ ढीली करें, उसे इन शब्दों के साथ भगवान् को अर्पित करते हुए — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”, जैसे पृथु ने अपना साम्राज्य रख दिया। उसे, लघु रूप में, उस महान् छोड़ने का एक अभ्यास बनने दें जिसकी ओर हम सब बढ़ रहे हैं, ताकि जब वह आए तो वह, जैसे पृथु के लिए था, हानि के बजाय एक

घर-वापसी हो। और मैत्रेय के वचन को हृदय में धारण करें: आज कुछ मिनट राजा पृथु की कथा को पढ़ने या स्मरण करने में बिताएँ — उनका शासन, उनकी भक्ति, उनका शान्त प्रस्थान — यह विश्वास करते हुए कि उस एक की कथा सुनने में जिसने भगवान् को प्राप्त किया, आप उसी धाम की ओर एक पग लेते हैं।

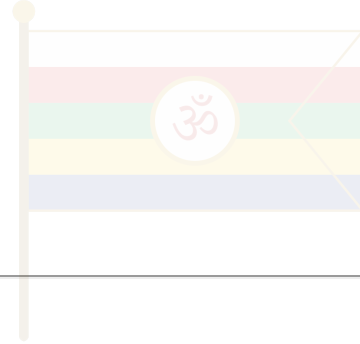
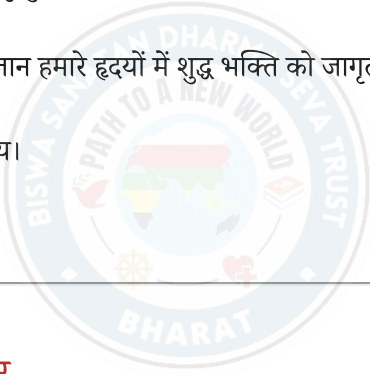
उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का त्रयोविंश अध्याय राजा पृथु के देदीप्यमान इतिहास को उसके शान्त समापन तक ले आता है। दीर्घ वर्षों तक धर्मपूर्वक राज्य करके तथा कुमारों के ज्ञान को हृदय में धारण करके, पृथु अपना सिंहासन पुत्रों के हाथों सौंपकर अपनी प्रिय रानी अर्चि के साथ वनवास ग्रहण करते हैं। वहाँ वे सर्वोच्च तपस्या करते हैं — वाणी, इन्द्रियों, तथा प्राण को वश में करते हुए — एक ही प्रयोजन के लिए: भगवान् को प्रसन्न करने। अपना हृदय पूर्णतः शुद्ध कर, वे अपने मन को संसार से खींचते हैं और, ज्ञान तथा वैराग्य से अपने ही सच्चे स्वरूप में स्थित होकर, वे अपना शरीर पूर्णतः समर्पित भाव से छोड़ देते हैं और भगवान् के सर्वोच्च धाम में प्रवेश करते हैं। उनकी निष्ठावान् रानी, उनसे पृथक् रहने में असमर्थ, संसार से उनका अनुसरण करके उसी शाश्वत धाम को जाती हैं। मैत्रेय भक्तों में अग्रगण्य पृथु की महिमा का सार प्रस्तुत करते हैं, और यह आश्वासन देते हैं कि इस पावन कथा को श्रद्धापूर्वक सुनने वाला भी उसी परम गन्तव्य को प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार भगवान् की शक्ति के अवतरण के रूप में आरम्भ हुआ एक जीवन उस पूर्ण भक्ति में समाप्त होता है जो आत्मा को घर ले जाती है — हमें यह सिखाते हुए कि भगवान् के प्रेमी के लिए मृत्यु अन्त नहीं बल्कि एक घर-वापसी है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, त्रयोविंश अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-23-king-prithus-asceticism-and-departure-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

